प्रस्तावित शोध–कार्य की रूपरेखा

डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन के दर्शन, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक विचारधारा : वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य के सम्बन्ध में उनकी प्रासंगिकता

पीएच0 डी0 उपाधि हेतु राजनीति विज्ञान विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय
में पंजीयन हेतु प्रस्तावित शोध प्रबंध सार
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
सामाजिक विज्ञान संकाय

बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद (झारखण्ड)

शोध–निर्देशक
डॉ0 अमूल्य शि0 सुमन बेक
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल
विश्वविद्यालय, धनबाद (झारखण्ड)

शोधार्थी
नामः– रमेश कुमार भट्ट
राजनीति विज्ञान संकाय
NET DEC 2019

शोध प्रबंध का सार

उनका जन्म 05 सितम्बर सन् 1888 ई0 को हुआ था। उनका बचपन ऐसे धार्मिक स्थलों पर बीता जो तिरूतनी एवं तिरूपति नाम से जाना जाता है। उनकी स्कूल तथा कॉलेज की शिक्षा ईसाई मिशन संस्थाओं में हुयी। साथ ही वे ईसाई धर्म के मुख सिद्धान्तों को जाना और बाइबिल के महत्वपूर्ण शब्दों को स्मरण करने के लिए पुरस्कार दिया गया था। उन्होने दसवीं की परीक्षा उच्य श्रेणी में पास किया। उन्होने बीस साल की उम्र से ही लेखन कार्य शुरू कर दिये। उनकी पहली पुस्तक सन् 1908 ई0 में प्रकाशित हुई थी। उसी साल स्नातकोत्तर की परीक्षा दी।

उनके पूर्वज एक छोटे से ग्राम सर्वपल्ली में रहते थे उनका परिवार 18वीं शताब्दी में तिरूतनी स्थान में ही बस गये। उनके परिजन यह चाहते थे कि राधाकृष्णन का नाम के आगे सर्वपल्ली अथात उनके ग्राम का नाम जुडा रहे अतः उनके सभी रिश्तेदार सर्वपल्ली लगाते थे। जिसके कारण उनके नाम में पहले सर्वपल्ली जुड़ गया। सन् 1903 ई0 में जब वे सोलह साल के थे तो उनका विवाह सिवाकामू के साथ हुआ था। उनका जन्म दिन प्रतिवर्ष 05 सितम्बर को हर्शोउल्लास के साथ शिक्षक दिवस पठन–पाठन के संस्थाओं में मनाया जाता है। क्योंकि 40 वर्षो तक एक शिक्षक के रूप में कार्यरत थे। इसी यादगारी में 05 सितम्बर को भारत सरकार पाठन के कार्य में लगे लागों को अच्छे काम के लिए प्रसस्ती–पत्र दे कर सम्मानीत करती है। वे सर्व गुण सम्पन्न एवं संस्कृति से परिपूर्ण थे। उन्होने एक शिक्षक से लेकर विश्वविद्यालय के कुलपति एवं देश के सर्वोच्य राष्ट्रपति पद पर भी विराजमान हुए। 1. (1992, पृश्ठ 31 बसन्त कुमार लाल), वे हमारे युग के एक महान विचारक और दार्शनिक थे। उनकी प्रसिद्धि अपने दार्शनिक तथा

धार्मिक कृत्यों से हैं। उन्होने माना कि दार्शनिक विचारों की परतों के अन्दर से गुजरना होगा। उन्होने भारतीय दर्शन और धर्म का गहन अध्ययन किया। वर्ष 1909 में प्रेसिडेन्सी कॉलेज मद्रास में एक शिक्षक के रूप में काम करने लगे। उसके बाद उनका बौद्धिक कार्य प्रारम्भ होने लगा। डॉ0 सर्वपल्ली समस्त संसार को एक पाठशाला मानते थे । उनका मत था कि शिक्षा के माध्यम से ही समस्त मानवों का मस्तिष्क विकशीत हो सकता है। और हर मानवों के मन में देश के प्रति समर्पित करने का भाव भी होना चाहिए। जिससे पुरे विश्व में देशों की नीतियों का आधार शान्ति व्यवस्था करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए । 2.डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन, 1955, पृष्ठ 18, उनमें ऐसी प्रतिभा थी कि विद्यार्थीयों को पढाने से पहले उस विषय को गहराई से खुद अध्ययन करते थे तब छात्रों को उस विषय के बारे में पढाते थे। साथ ही छात्रों को नैतिकता अपने आचरण में उतारने की प्रेरणा देते थे। अपने सरल वाक्य शैली प्रयोग कर हर विषय को रूचिकर बना देते थे। 3. पृश्ठ 105, उन्होने धर्म, दर्शन और विज्ञान कि व्याख्या अपने ढंग से की और कहा हैं कि धर्म, दर्शन, विज्ञान और कला को एक इकाई माना है।

उनका मानना था कि सामाजिक बुराईयां शिक्षा के द्वारा ही दूर किया जा सकता हैं क्यों कि धर्म एवं सामाजिक जीवन अलग नही हैं। वे हमेशा शिक्षा को ही कारगर मानते थे, वे समाज निर्माता के रूप में आधार स्तम्भ थे। उनका कहना था कि धर्म एवं सामाजिक जीवन के बीच कोई स्पस्ट विभाजन रेखा नही खीच सकते । सामाजिक संघटन अन्तगोत्वा मानव–प्राणियों द्वारा किए गए उन निर्णयों की मालिका पर निर्भर करता है जिनके द्वारा वे तय करते हैं कि उनके अनुयायी किस प्रकार जीवन बिताएंगे। ये निर्णय आध्यात्मिक विवेक के विषय हैं जब कि

उनकी पूर्ति हेतु कि जाने वाले कार्यो में प्रोद्योगिक ज्ञान तथा सामाजिक चेतना ही आवश्यक पडती हैं। 4. सं. 2010, पृ. 122 उनका कहना सच है कि धर्म कोई समाज–सुधार का आन्दोलन नही हैं और मनुष्य के जीवन का बहुत बडा भाग समाज मे बीतता है। एक स्थिर समाज–व्यवस्था सभ्य जीवन का प्राथमिक कार्य है। धर्म एक सामाजिक संयोजक– एक सीमेंट हैं, एक ऐसा मार्ग हैं जिसके द्वारा मनुष्य अपनी उच्चकांक्षाएं व्यक्त करते है और अपनी असफलताओं, निराशाओं के बीच शान्ति एवं सान्त्वना पाते है। 5.उनका संस्करण 1955, पृष्ठ 3. शिक्षक सिर्फ किताबी ज्ञान नही देते वे अच्छे समाज की स्थापना करते है। जिनको समाज का षिल्पकार भी कहॉ जाता हैं जो बिना किसी मोह के इस समाज को तराशते हैं। और सामाजिक परिस्थितियों से छात्रों को परिचित कराना भी होता है। समाज की उन्नति तथा उसके नव–निर्माण के सम्बध में उनका विचारधारा अत्यन्त सूक्ष्म तथा मौलिक हैं उनका कहना था कि 'समाज का उत्थान उन व्यक्तियों द्वारा होगा, जिनका व्यंतिव तथा जिनके जीवन में सत्यता हैं' सुखमय पारिवारिक जीवन
से ही उन्नतिशील समाज का जन्म होता हैं। 6. 1956, पृश्ठ 88)

उनका शैक्षणिक जगत में विशेष योगदान था। उनकी प्रसिद्धि शिक्षा जगत में फैल चुकी थी। वे अपने योग्यताओं के कारण ही एक शिक्षक से देश के सर्वोच्य पदों पर विराजमान हुए । वे विशेष प्रतिभा के धनी थे। वह एक महान शिक्षाशास्त्री होने के साथ वक्ता, विद्वान, दार्शनिक, प्रशासक इत्यादि। उनमें ऐसी विशिष्टता थी कि उच्च पदों पर भी लेखन के कार्य करते रहते थे। उनकी ख्याति देश विदेशों में भी फैल चुकी थी। वे मानते थे शिक्षा का उद्‌देश्य

विद्यार्थीयों में रूचि उत्पन्न करना है केवल ज्ञानवर्द्धन नही। लेकिन सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्ति और लगातार सिखते रहने की प्रवृति यह व्यक्ति में आत्म बल भरने का काम करता हैं। और हर क्षेत्र में सफलता का मार्ग दिखाता हैं। उनका मानना था कि ज्ञान का मार्ग शिक्षा हैं ज्ञान कुछ के लिए कठिन है सभी के लिए नही। वे कहते थे कि विश्वविद्यालय गंगा–यमुना रूप में मनाया जा रहा हैं। के संगम की तरह शिक्षकों और छात्रों के पवित्र संगम हैं। 7. (जे0 कृष्णामूर्ति, 1954, पृश्ठ 142)

वे हमारे भारत के एक कुशल राजनीतिक चिंतक भी थे। उनकी प्रतिभा को देखते हुए सभी जन यह चाहते थे कि वे भारतीय राजनीति में कदम रखे। गैर राजनीतिक होते हुए भी उन्हे राजदूत के रूप में कार्य किया। वे सोवियत रूस के राजदूत बने। और मास्को जाने के लिए कहॉ गया। सोवियत संघ से आने के बाद 1952 ई0 में भारत के प्रथम उपराष्ट्रपति पद पर नियुक्त किये गये । रूस की राजधानी मास्को में भारत के राजदूत पद पर रहते हुये। उनका रूस के साथ मित्रता बढाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा था, जो आज भी कायम हैं। 8. (महेन्द्र प्रसाद सिन्हा, 2016, पृश्ठ 129) वे भारत के प्रथम उपराष्ट्रपति पद पर रहे और उनके बाद द्वितीय राष्ट्रपति पद पर आसिन हुये। उनका कार्यकाल कठिनाइयों से भरा था। सन् 1967 के गणतंत्रा दिवस पर उन्होने देश को सम्बोधित करते हुए घोषणा किया था कि वह अब किसी भी सत्र के लिए राष्ट्रपति नही बनना चाहेंगे। 9. (हृदय नारायण मिश्रा, 1966, पृश्ठ 155)

वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य के सम्बन्ध में उनकी प्रासंगिकता अपने शौक्षिक चिन्तन से शिक्षा रूपी पौधे को सिंचने का प्रयास किया जिसके नये कोपलों

और फलों आने वाली पीढ़ी संतुष्ट हो सके। शिक्षा के अन्तर्गत उन्होने तर्क के माध्यम से झूठ और अविश्वास को बाहर निकालने की बात कही और आत्म–निर्भयता भरने पर बल दिया।

वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए उन्होने प्रचलित मान्यताओं को विवेक और तर्क की कसौटी पर कसते हुए प्राचीन उपनिशदों से लेकर आधुनिक दार्शनिकों तक के विचारों का सुगम शैं।

ौली में मूल्यांकन किया है। 10. संस्करण 2016, पृश्ठ 160)

शोध की समस्या

(1) वर्त्तमान समय में दार्शनिक विचार धाराओं का पतन हो रहा है। क्योंकि राधाकृष्णन द्वारा बतायें गये बातों का अनुसरण कार्य हो रहा हैं।

(2) लोग मौलिक सुख के बदले क्षणीक सुख यानी उपभोक्तावादी बन गये हैं। क्योंकि राधाकृष्णन के दार्शनिक एवं सामाजिक विचारों से अनभिज्ञ हैं।

(3) समाज में विभिन्न प्रकार की असमाजिकता पाई जाती हैं।

(4) हमारा देश शैक्षणिक रूप से अभी भी पिछड़ा हुआ हैं। पर शिक्षक दिवस पर ही क्यों राधाकृष्णन को याद किया जाता हैं।

(5) दूसरे देशों के साथ हमारे राजनीतिक सम्बन्धों मे अस्थिरता हैं।

साहित्य समिक्षा

उनके के बारे में मेरे मन में बचपन से ही जिज्ञासा जगी हुई थी। अतः प्रस्तावित शोध में उनके दर्शन, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक

विचारधाराः वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य के सम्बन्ध में उनकी प्रासंगिकता पर शोध करने का अवसर प्राप्त हुआ उनसे संबंधित निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन किया। बसन्त कुमार लाल, संस्करण 1992, पृश्ठ 313 – एकवद, जगत की वास्तविकता, मनुष्य की गरिमा, मानव स्वतन्त्रता की वास्तविकता, अन्तर्दृश्टि का महत्त्व, आदि विशयों पर मीमांसा की गई है एवं विद्वानों की अलोचनात्मक टिप्पणियों का समावेश तथा दर्शन को जीवन के साथ जोडनें का सकारात्मक प्रयास किया गया हैं। उनका का मुख्य उद्देष्य उस प्रचलित धारणा का खण्डन है कि आज के भारत में दार्शनिक चिन्तन हो ही नही रहा है एवं समकालीन विचारक दार्शनिकों के विचारों की पुनरावृत्ति मात्र ही करते है। अतः विचारों पर पुनः विचार, उनमें पारम्परिक विचारों के अवशेष तथा उनके नवीन मौलिक विचारों के अंश दोनों को उभारने का एवं प्रकाश में लाले का कार्य पुस्तक सराहनीय ढ़ग से करती हैं। समाज के उत्थान के लिए उन्होने बहुत सारे पुस्तकें लिखी और प्रकाशित भी हुई हैं। फिर भी उनके विचारों का पतन हुआ हैं मैं उनके व्यापक विचारों को शोध करना चाहता हुॅ। उनके संस्करण 1955, पृष्ठ 18 इस पुस्तक में उन्होने विशेष कर नौजवानों को संदेश देते हैं कि देश में बहुत बड़ा परिवर्तन हो रहा हैं और आप को अपना पथ बड़ी सावधानी से चुनना है। उनके संस्करण 2017, पृश्ठ 105 इस पुस्तक में लिखे हैं कि हिन्दू धर्म के केन्द्रीय सिद्धांतों इसके दार्शनिक और आध्यात्मिक सिद्धांत, धार्मिक अनुभव, नैतिक चरित्र और पारंपरिक धर्मो की व्याख्या की गई हैं। और

दर्शनशास्त्र के अध्ययन काल में क्रिश्चियन विधार्थियों से इनकी होड़, धार्मिक विचारों चिन्तनधाराओं के सम्बन्ध में चलती रहती थी। इस पर उनकी आम आलोचना होती थी। इस आलोचना से बाध्य एवं प्रेरित होकर राधाकृष्णन ने हिन्दुत्व एवं भारतीय अध्यात्मवाद का विस्तृत स्वाध्याय प्रारम्भ किया । इस क्रम में इन्होनें, वेद पुराण, वेदान्त का स्वाध्याय किया और धार्मिक चिन्तकों, ऋशियों, मुनियों के मतों और मंत्रो का अध्ययन किया। इन्होने अपने (शोध प्रबंध के लिए एथिक्स ऑफ वेदान्त) को ही विषय बनाया। इस शोध में अध्यात्म की गम्भीर समस्याओं को बहुत ही सहज तरीके से हल किया गया था। इससे स्पस्ट होता था कि धर्म, एक विवेकपूर्ण चिन्तन, फलदायक कर्म और उचित संस्था के माध्यम से होता है। अप्रैल, 1909 ई0 में वे प्रेसिडेंसी कॉलेज मद्रास में प्रध्यापक बने। संस्करण 2010, पृष्ठ 122 वे लिखते हैं कि भारतीय दर्शन विश्व की समस्या को समझाने का एक मानवीय प्रयास हैं इसलिए इस पर जाति और संस्कृति के प्रभावों का पड़ना निश्चित हैं। अंतप्रज्ञा एवं दैवी प्रेरणा के शाश्वत जगत का इन्होने एक श्रृखलाबद्ध विचार अपनी रचना में व्यक्त किया हैं। संस्करण 1953, पृष्ठ 03 में दर्शन के विविध पक्षों का मानक विवेचन प्रमुख अठारह उपनिशदों (ईशु, केन, मठ, प्रश्र, मुण्डक, माण्डूक्य, श्रेताश्रतर, कौशीतकी, छान्दोग्य, बृहदारण्डक आदि।) के विचारों को बड़े सरल और स्पस्ट ढंग से प्रस्तुत किया है। संस्करण 1956, पृश्ठ 88 – इस पुस्तक में लिखते हैं कि प्राचीन काल से ही भारतवासी ईश्वर के प्रत्यक्ष अनुभव के रूप में धर्म–भावना से अत्यन्त प्रभावित रहे हैं। जे0 कृष्णामूर्ति, संस्करण 1954, पृश्ठ 142–वे कहते हैं कि मनुष्य एक ऐसा उभयधर्मी प्राणी हैं जो एक साथ दो विश्वों में रहता है एक विश्व तो वह जो प्रकृति से मिला हुआ है, जो पदार्थ, जीवन और चेतना का विश्व है; दूसरा मनुष्य

द्वारा रचित प्रतीकों का विश्व है। महेन्द्र प्रसाद सिन्हा, संस्करण 2016, पृश्ठ 129 भारतीय दर्शन की रूप–रेखा यह प्रमाणित करती है कि यहॉ आस्तिक और नास्तिक शब्द का प्रयोग एक विशेष अर्थ मे हुआ है। वेद ही वह कसौटी है जिसके आधार पर भारतीय दर्शन के सम्प्रदायों का विभाजन हुआ है। हृदय नारायण मिश्रा, संस्करण 1966, पृष्ठ 155 भारतीय दर्शन में जब भी समकालीनता की चर्चा होती है, तो बात अधिक से अधिक उनीसवीं शताब्दी में चलने वाले चंद सुधारवादी आंदोलनों तथा स्वामी रामकृष्ण परमहंस स्वामी विवेकानन्द, रवीन्द्र नाथ टौगोर, महात्मा गॉधी, महर्षि दयानंद,, महर्षि अरविंद आदि के विचारों तक सीमित होकर रह जाती है। संस्करण 2016, पृष्ठ 160 उन्होने स्पस्ट किया हैं कि किस प्रकार प्राचीन और नवीन चिन्तन–प्रयासों के बीच से ही एक ऐसी आस्था, एक ऐसे युग–सत्य की उपलब्धि हो सकती है, जो हमारी अपूर्णताओं और अपर्याप्तताओं को दूर करने में सहायक होगी। इनकी धारणा थी कि इनके सभी कार्य जल्दबाजी में हो पर भी प्रारम्भ हो जाते है। इन्हें विश्वास था कि प्रभु दयालु हैं और प्रभु की कृपा तत्काल, अकारण और स्नेहपूर्ण होती है। ये मानते थे कि इनकी सफलताऍ प्रभु की कृपा का ही फल है पर असफलताओं के लिए वे स्वयं दोशी हैं ।

शोध का उद्देश्य

(1) उनके दर्शन द्वारा मूल्य का विकास करना।

(2) वे लोगों को उपभोक्तावादी विचारधारा के बदले मौलिक मूल्यों की ओर प्रेरित करने का प्रयास किया जाना।

(3) राधाकृष्णन द्वारा सामाजिक बुराईयों जैसे भेद–भाव, अशिक्षा, जाति प्रथा, आदि का निदान उन्मूलन किया जाना।

(4) शिक्षा के प्रचार–प्रसार से पिछड़ा पन के निदान निकालने का प्रयास किया जायेगा।

(5) विश्व स्तर पर राजनीतिक सम्बन्धों को मजबुत बनाने का प्रयास किया जाना।

शोध परिकल्पना

(1) उनका दर्शन पुरे समाज के लिए जरूरी हैं।

(2) उनके अनुसार मूल्य तथ्य क्षणिक मूल्यों से ज्यादे प्रभावशाली हैं। जो वर्त्तमान समय में आवश्यक हैं।

(3) वर्त्तमान समय में हमारे समाज में बुराईयां विध्यमान हैं। जिसे राधाकृष्णन के विचारों द्वारा निराकरण निकाला जा सकता हैं।

(4) उनके बौद्धिक शिक्षा अनुसार सामाजिक विषमताओं को दूर किया जा सकत हैं।

(5) दूसरे देशों के साथ राजनीतिक सम्बन्ध में सुधार जरूरी हैं। जिसे राधाकृष्णन द्वारा बतायेनुसार चलकर सुधारा जा सकता हैं।

शोध प्रबंध के अध्ययन विधि

इस शोध में विशेष कर सर्वेक्षण विधि, विशलेषणात्मक विधि, तुलनात्मक विधि, एवं ऐतिहासिक विधि का प्रयोग किया जायेगा।

(1) उपकरण :– कम्प्यूटर, इन्टरनेट, समाचार, अखबार कोलकाता का नेशनल पुस्तकालय से सम्बन्धित जानकारी, रॉची का पुस्तकालय से सम्बन्धित

जानकारी, महाविद्यालय का पुस्तकालय से मदद,

सप्ताहिक, मासिक एवं वार्षिक प्रकाशित प्रत्रिकाएँ।

(2) स्रोत :– 1. प्राथमिक श्रोत :– अवलोकन, साक्षात्कार प्रश्नावली।

2. द्वितीय श्रोत :– प्रकाशित पुस्तके, प्रलेख, पत्र पत्रिकाएँ विभिन्न संस्थाओं के प्रकाशन।

शोध का महत्व

(1) राधाकृष्णन के विचारों द्वारा समाज में अच्छे मूल्यों का बढ़ावा मिलेगा।

(2) राधाकृष्णन के विचारों का अनुपालन कर लोग स्वार्थ भाव से उठ कर वसुधैव कुटुम्बकम् की विचारधारा की ओर बढ़ेगा।

(3) राधाकृष्णन के विचारों का अनुपालन करने पर सामाज में बुराइयां कम होगी।

(4) शिक्षा के द्वारा सभी मानवों का पूर्ण विकास होगा।

(5) उनके विचारों द्वारा भारत का सम्बन्ध विश्व स्तर पर बढेगा।

अध्यायीकरण

प्रथम अध्याय :– प्रस्तावना

क). शोध समस्या
ख). शोध उद्देश्य
ग). शोध परिकल्पना
घ). शोध महत्व
च). साहित्य समिक्षा
छ). शोध प्रबंध अध्ययन

द्वितीय अध्याय	:—	जीवनी एवं जीवन दर्शन ।
तृतीय अध्याय	:—	उनके दार्शनिक विचार ।
चतुर्थ अध्याय	:—	उनके सामाजिक विचार ।
पंचम अध्याय	:—	शिक्षा में योगदान ।
षष्ठ अध्याय	:—	राजनीतिक विचार एवं उनके योगदान ।
सप्तम्	:—	निष्कर्ष एवं सुक्षाव ।